International Advance Journal of Engineering, Science and Management (IAJESM)
ISSN -2393-8048, July-December 2022, Submitted in August 2022, iajesm2014@gmail.com

पाली ग्रंथों में वर्णित विवाह प्रथा

Dr. Pradeep Kumar Kesharwani, Department of History, Kalinga University, Raipur (CG)
Kamal Rana, Research Scholar, Department of History, Kalinga University, Raipur (CG

सारांश

भारतीय परिवारों में पितृ प्रधानता रही है, इसलिए बहुपत्नीत्व प्रथा को समाज में मान्यता मिली। पालि पिटकों में बहुविवाह के बहुत से उदाहरण हैं। मज्झिम निकाय के रट्ठपाल सुत्त में एक ब्राह्मण गृहपति पुत्र रट्ठपाल की कई पत्नियों का जिक्र है। अंगुत्तर निकाय में चार सुंदर पत्नियों वाले एक धनी गृहस्थ भी बताया गया है। थेरी गाथा में बताया गया है कि थेरी इसिदासी का विवाह एक वरिष्ठ पुत्र से हुआ था। वह पहले से ही श्रेष्ठिपुत्र था और उसकी पत्नी शीलवती, गुणवती और यशवती थीं। एक जातक में एक ब्राह्मण का वर्णन है जो एक महान व्यक्ति से अपनी चार पुत्रियों का विवाह करता था। यद्यपि इन घटनाओं को पूरी तरह से सही नहीं माना जा सकता, पुराने भारत में बहुविवाह आम था, लेकिन यह अधिकतर उच्च वर्गों, विशेष रूप से कुलीन वर्ग और राजघराने में था। इससे पता चलता है कि बहुविवाह अधिकांश लोगों का आदर्श नहीं था।

परिचय

हिंदू धर्म में पैतृक ऋण की अवधारणा ने बहुविवाह के कुछ उदाहरणों को जन्म दिया। मान्यता थी कि परिवार की निरंतरता सुनिश्चित करने और कुछ अनुष्ठानों को पूरा करने के लिए एक पुत्र चाहिए था। यदि उनकी पत्नी एक पुत्र को जन्म देने में असमर्थ है, तो पति दूसरी पत्नी लेने का प्रयास कर सकता है। मनुष्य मोक्ष को नियंत्रित नहीं कर सकता। पुत्र समाज में अधिक महत्वपूर्ण हो गया। पुत्र के अभाव में पुनर्विवाह भी बढ़ता गया। लेकिन बहुविवाह को आम तौर पर हिंदू समाज में आदर्श नहीं माना गया। दम्पती शब्द भी पति-पत्नी की जोड़ी को बताता है। धर्मशास्त्र भी बहुपत्नीत्व का समर्थन नहीं करते। धर्मशास्त्रों ने बहुपत्नीत्व को मान्यता दी है जब पत्नी चिररूग्णता के कारण धर्मकर्म करने में असमर्थ हो जाए या बांझ हो जाए तो पुरुष को पुनर्विवाह करना चाहिए, लेकिन वास्तव में बहुत सी पत्नियाँ ऐसा नहीं करती होंगी। यह भी महत्वपूर्ण है कि विवाह के मूल में पारस्परिक प्रेम की प्रधानता होती है, इसलिए पति अक्सर पुनर्विवाह नहीं करते। एकाधिक पत्नियाँ एकमात्र व्यक्ति को रख सकती हैं जो उनका पालन पोषण कर सकता है। उपलब्ध साक्ष्यों से यहीं पता चलता है कि बहुविवाह का प्रचलन मुख्यतः राजवंश और अभिजात वर्ग तक सीमित था। इस वर्ग को राजकन्याएँ युद्ध में जीतने, उपहार में या स्वयंवर में मिलती रहती थीं। महाभारत में राजाओं के लिए बहुपत्नीकता को अधर्म नहीं बताया गया है। राजवंश में मर्यादा पुरुषोत्तम राम की तरह एक पत्नीव्रती का बहुत कम उदाहरण मिलता है। राजपुरुषों में से एकमात्र सुरुचित एक पत्नीव्रती है, बाकी सब बहुपत्नीचारी हैं। राजाओं की सैकड़ों रानियों का उल्लेख जातकों में कई जगह मिलता है, लेकिन इनमें इस विचार की अभिव्यक्ति भी मिलती है कि किसी भी स्त्री को मरना अभिशाप है। बुद्ध के समकालीन सभी राजाओं, बिबिसार, प्रसेनजित, उदयन और अजातशत्रु, सभी ने कई पत्नियाँ थीं। यही कारण था कि शासकीय वर्ग में बहुपत्नीकता आम थी और अमीर लोग एक से अधिक विवाह करते थे। जैसा कि पाली पिटकों में दिखाया गया है, प्राचीन भारत में विवाह में माता-पिता की बातचीत और कुछ हद तक व्यक्तिगत पसंद का संयोजन शामिल था। दूल्हे के परिवार ने एक अच्छी दुल्हन की तलाश करके प्रक्रिया शुरू की, लेकिन अंततः दुल्हन के पिता ने निर्णय लिया। ब्राह्मण की चार पुत्रियाँ थीं, हर एक की एक प्रेमिका थी। सामाजिक परम्परा के अनुसार वर-वधू के अभिभावकों द्वारा विवाह सम्बन्ध का प्रयास किया जाता था, लेकिन वर वधू की इच्छाओं और आवश्यकताओं को भी ध्यान में रखा जाता था। इसके बिना जातकों में युवतियों के प्रेम प्रसंगों का उल्लेख नहीं मिलता।

जाति, कुल और गोत्र के सिद्धांत:

बुद्ध युगीन समाज में जातिगत व्यवस्थाएं मजबूत थीं, इसलिए किसी कुल के रक्त को दूषित माना जाता था क्योंकि बहुत से लोग एक दूसरे से विवाह करते थे। अतः कुल की पवित्रता को बचाने के लिए तत्कालीन समाज ने सजातीय विवाहों को ही सर्वोत्तम माना और अंतर्जातीय विवाहों को प्रोत्साहित नहीं किया गया। शास्त्रकार भी अंतर्जातीय विवाहों को धार्मिक रूप से अनुचित समझते थे। बौद्ध-पिटक में वर्णित विवाहों में शामिल लोगों को अक्सर एक ही जाति या कुल का बताया जाता है— ब्राह्मण, क्षत्रिय, श्रेष्ठि, भांडागारिक आदि समान सामाजिक प्रतिष्ठा और आर्थिक स्थिति वाले कुलों में अपनी संतान को विवाह करते थे। वे अपने पुत्रों को एक समान कुल और जातीय कन्या की खोज में दूत भेजते थे। धर्मशास्त्र भी इसकी पुष्टि करते हैं। क्योंकि वे सजातीय कन्या का पाणिग्रहण भी करते हैं।

उस समय समाज में वर-वधू का सजातीय होना ही पर्याप्त नहीं था; दोनों पक्षों ने एक दूसरे के कुल का भी ख्याल रखा। जातक कथाओं में विवाहों में जाति और कुल दोनों का वर्णन होता है। वर पक्ष ने हमेशा कोशिश की कि कन्या कुलवती बन जाए। जैसा कि पाली पिटकों में दिखाया गया है, प्राचीन भारत में विवाह में माता-पिता की बातचीत और कुछ हद तक व्यक्तिगत पसंद का संयोजन शामिल था। दूल्हे के परिवार ने एक अच्छी दुल्हन की तलाश करके प्रक्रिया शुरू की, लेकिन अंततः दुल्हन के पिता ने निर्णय लिया। यह प्रथा धर्मशास्त्र की व्यवस्था से मेल खाती थी, क्योंकि धर्मशास्त्रकार प्रतिलोम विवाह को प्रतिबंधित करते हैं. आपके द्वारा वर्णित अनुलोमा प्रणाली

प्राचीन भारत की एक ऐतिहासिक अवधारणा है जो विवाह नियमों को किसी व्यक्ति की जाति के आधार पर परिभाषित करती है। वर्तमान भारत में इस प्रणाली का बहुत अधिक उपयोग नहीं किया जाता, क्योंकि सामाजिक सुधारों ने विवाह को अधिक समतावादी बना दिया है। और उसने उसे विवाह कर लिया। प्राचीन भारत में जाति व्यवस्था ने एक भूमिका निभाई, लेकिन प्रेम विवाह को मान्यता दी गई थी। प्रेम के आधार पर अंतरजातीय विवाहों में, जहाँ पुरुष निम्न जाति के थे और महिला उच्च जाति की, शादी के लिए सामाजिक स्वीकृति कम थी। यह आपके प्रस्तुत भाग में स्पष्ट है, जहां पिता अपने बेटे को एक उच्च जाति की लिच्छवी लड़की से शादी करने से रोकता है। पालि ग्रन्थों में भी विवाह के समय गोत्र का विचार किया जाता है, लेकिन ऋग्वैदिक युग में ऐसा नहीं था। कोशल राज प्रसेनजित् ने अंगुलिमाल के माता-पिता को बताते हुए कहा, "महाराज, मेरे पिता गार्ग्यगोत्री थे और माता मैत्रायणी गौत्र की थी।"पालि-पिटकों में गोत्र की भिन्नता नाम से और कहीं जाति से बताई गई है, जिससे लगता है कि गोत्र शब्द एक कुल विशेष की वंश परम्परा का बोधक बन गया है। ब्राह्मण ग्रंथों में इस तरह का उल्लेख मिलता है, जो बताता है कि वैदिक काल में विवाह के संबंध में सामाजिक मानदंडों में बदलाव आया था। पाणिनी और पतंजलि की कृतियों का संक्षिप्त विवरण निम्नलिखित है: जिस तरह से जोड़ों का उल्लेख किया गया है, इसका अर्थ है कि विवाह सिर्फ एक समूह में नहीं था । जातकः ये कहानियाँ बुद्ध के समय के सामाजिक वर्ग (गोत्र) और विवाह के बीच संबंध को दिखाती हैं। मजिदवम निकायाः यह ग्रंथ विवाह में गोत्र जानने के महत्व को उजागर करता है। कछपा जातकः इस कहानी से पता चलता है कि गोत्र के बाहर गैर-पारिवारिक विवाह आम तौर पर स्वीकार किया जाता था। प्रारंभिक कानून निर्माताओं की खामोशी: उनके कार्यों में अंतर्विवाह के खिलाफ कोई नियम नहीं था, जो इसे सख्ती से प्रतिबंधित नहीं करता था। अंत में, परिच्छेद अंतर्विवाह और गैर-अंतर्विवाह दोनों विवाहों को स्वीकार करने से समाज में संभावित बदलाव की ओर संकेत करता है जो बाद वाले का पक्ष लेता है। स्वभगिनी का पाणिग्रहण उनमें से एक था। यह प्रथा पहली बार मिस्र और ईरान में की गई थी। यह विवादास्पद है कि ऐसा व्यवहार भारतीय समाज में था या नहीं। ऋग्वेद में यम और यमी की कहानी मिलती है, लेकिन इसे भगिनी और भ्राता के विवाह का प्रभाव नहीं मान सकते। पालि ग्रन्थों में बताया गया है कि शाक्यों ने अपनी वंश को बचाने के लिए अपनी भगिनोयों से विवाह किया था, लेकिन यह एक अस्थायी व्यवस्था थी और कोई स्वीकार्य सामाजिक प्रथा नहीं थी। वास्तव में, सभ्यता का विकास क्रमिक रूप से हर जगह हुआ है, इसलिए भारत जैसे बड़े देश के कुछ हिस्से में इस तरह की एक आदत रही भी होगी, इसमें कोई आश्चर्य नहीं है। वैदिक युग में भाई-बहन के विवाह आम नहीं थे, और कोई प्रमाण नहीं है कि यह आम था। रॉयल्टी के केवल सौतेले भाई-बहनों (पूर्ण भाई-बहनों) के उदाहरण थे। यह शाही परिवार में विरासत या उत्तराधिकार के लिए एक संभावित औचित्य का संकेत देता है, न कि आम सामाजिक मानदंड। बौद्धायन के अनुसार, मतुल दुहिता (अपने मामा की बेटी) से शादी करने की प्रथा प्राचीन भारत में प्रचलित थी, विशेष रूप से दक्षिण भारत में, लेकिन कुछ हद तक उत्तर भारत में भी थी। समाज के उच्च वर्ग और दोहरी जाति इसे अस्वीकार्य मानते थे, लेकिन निचले वर्ग इसे अधिक स्वीकार करते थे।

संदर्भ ग्रंथ सूची:-

पुग्गल प×ञति : लैंड्सवर्ग, जी॰ और मिसेज रोज डेविडस. पी॰ टी॰ एस॰, लंदन, 1914
पेतवत्थु : महापंडित राहुल सांकृत्यायन, रंगून, 1934
भगवती सूत्र : अभयदेव की टीका सहित, बंबई, 1918–21
मज्झिम निकाय : ट्रेंकनर बी॰ और चामर्स, आर॰ पी॰टी॰एस॰ लंदन, 1948–51
महावंश : (अनुदित), गाइगर, पी॰टी॰एस॰ लंदन, 1912
महावस्तु : सेनार्ट पेरिस, 1882–97
मिलिन्दप×हो : वाडेकर, आर॰ डी॰, बंबई 1940
विनय पिटक : रीज डेविडस. टी॰ डब्ल्यू और ओल्डेनबर्ग, खण्ड–13, 17, 20 ऑक्सफोर्ड, 1881–85 (हिन्दी अनुवाद), महापंडित राहुल सांकृत्यायन, महाबोधिसभा, सारनाथ, 1935
विमानवत्यु : (सम्पादित) महापंडित राहुल सांकृत्यायन, रंगून, 1937
संयुक्त निपाय : (सम्पादित) लियोन फ्रियर और मिसेज रोज डेवड्स, पी॰ टी॰ एस॰ लंदन, 1884–1904
(अनुदित), दी बुक ऑफ दी किण्डर्ड सेयिंग्स, वुडवर्ड, एफ॰ एल॰, पाली टैक्ट्स सोसायटी (पी॰टी॰एस॰), लंदन, 1930
सामन्तपासादिक : (सम्पा.) जे॰ तक्कुस एण्ड एम॰ नागी॰ पी॰टी॰एस॰, लंदन, 1916–18